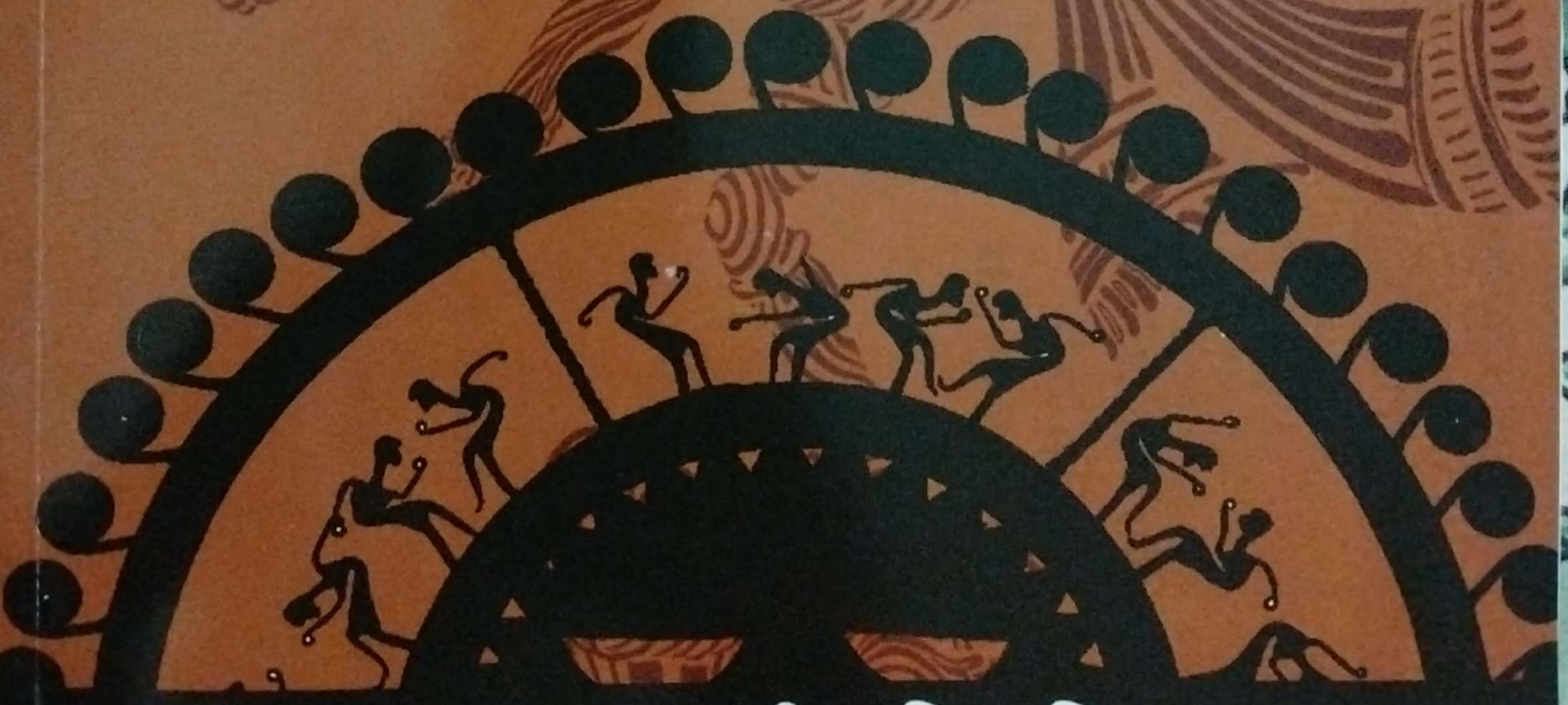
ISSN : 0976-2566

कला–सौरभ

अंक षोडश : वर्ष २०१९

विश्वविद्यालयीन रेफरीड शोध-पत्रिका

(University Refereed Research Journal)



इन्दिरा कला संगीत विश्वविद्यालय

खैरागढ़ (छ.ग.)

(नेक द्वारा 'A' ग्रेड प्रत्यायित)

कला-सौरभ

षोडश अंक : 2019
विश्वविद्यालयीन शोध–पत्रिका
(University Research Journal)

प्रकाशक :
इन्दिरा कला संगीत विश्वविद्यालय
खैरागढ़ (छ.ग.)
दूरभाष : 07820–234232, फैक्स : 234108
वेबसाइट : **www.iksv.ac.in**

मूल्य : रु. 684 भारत में, **US$**................ विदेशों में

छत्तीसगढ़ संवाद
नवा रायपुर अटल नगर, रायपुर (छ.ग.)

शोध–पत्रिका कला सौरभ : अंक षोडश में प्रकाशित विचार लेखकों के हैं। इसके लिए सम्पादक मण्डल उत्तरदायी नहीं है।

कला सौरभ : अंक षोडश

अनुक्रमणिका

बस्तर की बौद्ध प्रतिमाओं का तांत्रिकीकरण

– आराधना चतुर्वेदी

भारत वर्ष में बस्तर का क्षेत्र अत्यंत ही वन्य सम्पत्तियों में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। यह क्षेत्र केरल प्रदेश के बराबर है। छत्तीसगढ़ के महत्वपूर्ण हिस्से के रूप में यह प्राचीन कला एवं संस्कृति को समेटे हुये है। प्राचीन समय से इस क्षेत्र में ब्राम्हण और जैन धर्मो के साथ ही बौद्ध धर्म एवं उससे सम्बन्धित कलाओं का विशेष रूप से विकास हुआ। बस्तर का समूचा क्षेत्र मौर्यकाल में बौद्ध कला एवं संस्कृति से आच्छादित था। शुंगवंशी काल में और उसके पूर्व भी इस क्षेत्र में बौद्ध धर्म का प्रभाव विशेष रूप से पड़ा था। जिसका प्रदर्शन वहां मौजूद प्रतिमाओं से होता है। वैसे तो सम्पूर्ण बस्तर क्षेत्र बौद्ध धर्म के वज्रयानी प्रभाव से आप्लावित रहा है। जिसका सीधा असर वहां के जनजीवन और सामाजिक परिवेश पर भी पड़ा है। रामायण काल से लेकर बौद्धकाल तक और बौद्ध काल से वर्तमान युग तक बस्तर की संस्कृति तांत्रिक संस्कृति रही है। लेकिन बौद्ध धर्म के तांत्रिक प्रभाव तंत्रयान से अधिक गहरे रूप में प्रविष्ट होता है। बस्तर में प्रत्येक कार्य की सिद्धि में तंत्रयान का प्रमुख योगदान रहा है। यह परम्परा आज भी वहां की सामाजिक संस्कृति में रची बसी हुई है। प्रतिमाओं के निर्माण, उसके रख–रखाव, उसकी साधना एवं संरक्षण विधियों में पूर्ण रूप से स्थानीय प्रभाव दिखाई देता है।

बस्तर क्षेत्र में जिला नारायणपुर तांत्रिक गतिविधियों का प्रमुख आश्रय क्षेत्र माना जा सकता है। यहां से 30 कि.मी. उत्तर दिशा में भोंगापाल नामक ख्याति लब्ध बौद्ध प्रतिमा, विहार, स्तूप आदि से समृद्ध स्थल है। जहां पहुंचने का सुगम मार्ग नहीं है। लेकिन कच्चे मार्गो से वहां पहुंच की व्यवस्था हो जाती है। भीतर के गांव में सुरक्षा, स्वास्थ्य और शिक्षा की कोई विशेष व्यवस्था दिखाई नहीं देती। इसलिए वहां के लोग अपनी प्रत्येक समस्या का निराकरण तंत्रयानी पद्धति से करते है। बस्तर की आदिवासी संस्कृति और कला का मूर्धन्य केन्द्र भी भोंगापाल को माना जाता है। जहां पर घोटुल की प्रथा आज भी विद्यमान है। ऐसे सघन एवं विरल क्षेत्र में बौद्ध संस्कृति का जीवित रहना अपने आप में रहस्य प्रकट करते है। इस संस्कृति के अभ्युदय के पीछे प्रमुख कारण उसका तंत्रयानी स्वरूप ही है। जो आदिवासियों के जीवन के अत्यंत निकट है।

भोंगापाल में पुरातात्विक खुदाई के फलस्वरूप वहां से विशाल बौद्ध विहार, बौद्ध मूर्तियां, शाक्त प्रतिमाएं, शाक्त मंदिर, शिवमंदिर आदि के ध्वंसावशेष एक ही परिसर के क्षेत्र में फैले हुए प्राप्त होते है। चूंकि सभी सम्प्रदायों में किसी न किसी रूप से तंत्रयान का स्वरूप समाहित था। इसलिए उनमें परस्पर समन्वय की भावना भी दिखाई पड़ती है। सभी सम्प्रदाय का प्रवेश तंत्रयानी युग में समान रूप से हो गया था। अतएव उनके अनुयायी एक ही क्षेत्र में अनुष्ठान, साधना, मनन, चिंतन आदि किया करते थे। बौद्ध विहार में स्थानीय बेसाल्ट प्रस्तर से निर्मित एक विशाल बुद्ध की प्रतिमा प्राप्त की गई थी। जो अभी भी वहां के गर्भगृह में प्रस्थापित है। बुद्ध प्रतिमा का परिमाप 130x125x25 से.मी. है। यह प्रतिमा उष्णीश, मत्स्याकार अर्धोन्मीलित नेत्र, कम्बुग्रीवा, सुसंवृत्तस्कन्ध, प्रदक्षिणावर्त्तकेश, शुकनासिका, सिंहहनु, गोलमुखमण्डल, धनुषाकार भौंहे, भ्रुर्वोऽमध्ये ऊर्णा, स्थितोऽवनत् प्रलम्बवाहु, क्षीणकटि, गहरीनाभि, न्यग्रोध परिमण्डल काय, वृत्ताकार सादा प्रभामण्डल एवं सरलदीप्तिगात्र से युक्त है। एकॉसिक, पद्मासनस्थ, प्रलम्बकर्णपाश, अंगप्रत्यंग आनुपातिक

एवं सौम्य स्मितहास्य से सुशोभित प्रतिमा तपस्यारत् होने के कारण कृशोदर उत्कीर्णित है।[1] वही पास में ही शाक्त मंदिर भी है जो क्षतिग्रस्त हो चुका है। उसके गर्भगृह में सप्तमातृकाएं एक प्रस्तर खण्ड में निर्मित है। तंत्रयानी प्रभाव एवं स्थानीय आदिवासी परम्परा के तहत इन प्रतिमाओं को आदिवासी समाज के देवी–देवता माना जाता है, बुद्ध को बोड़मदेव (तांत्रिक नाम) और शाक्त प्रतिमाओं को बोड़ी (बोड़मदेव की पत्नियां) के रूप में माना जाता है। इनकी साधना वहां के आदिवासी समुदाय करते है। उनकी तांत्रिक परम्परा में उक्त देवी–देवता तांत्रिक सिद्धि में बहुत बड़ा योगदान करते हुए उल्लिखित है। ये प्रतिमाएं और इनका क्षेत्र घने वन्य क्षेत्र में स्थित है। जो एकान्त साधना के मन्तव्य को पूरा करता है।

आदिवासियों का यह मानना है कि इन देवी–देवताओं के अंगो से चूर्ण लेकर मंत्रसिद्धि के माध्यम से अगर किसी भी नवयुगल को खिला दिया जाय तो वे परस्पर प्रेम में बंध जाते है। इसी प्रकार अगर कोई प्रेमी या प्रेमिका एक दूसरे को उक्त चूर्ण खिला दे तो इसका परिणाम अपेक्षाओं के अनुरूप मिलता है। क्षेत्र के निवासी यह भी मानते है कि अगर कोई दम्पत्ति जोड़े में एक–दूसरे को नापसंद करते है तो उनकी समस्या का समाधान यहां के देवी–देवताओ के चूर्ण रामबाण की तरह कारगर होते है। इस परिप्रेक्ष्य में आदिवासी समाज यह भी मानते है कि अगर कोई अजनबी धोखे से किसी के हाथों यह चूर्ण खा ले, तो यह खिलाने वाले के प्रति आकर्षित हो जाते है। वहां के सामाजिक जीवन में इस तरह की घटनाएं आम है। वहां अपने गृहस्थ जीवन को संवारने के लिए या सुखद गृहस्थ बसाने के लिए यह चूर्ण आज भी उपयोगी सिद्ध हो रहा है। आदिवासी लोग चोरों के भय से इन प्रतिमाओं की सतत् निगरानी करते है, एवं चूर्ण गिरोहो को देखते ही पकड़ लेते है और उन्हे मनमाने ढ़ंग से दण्डित करते है। कभी–कभी तो इस माहोल में बेगुनाहों को भी सजा मिल जाती है। इस समस्या में प्रमुख सोचने वाली बात यह है कि अंधविश्वास की जड़े इतनी गहरी हो गई है कि विज्ञान का उससे कोई सरोकार नजर ही नहीं आता। शिक्षित लोग भी मोह में आकर इस मोहनी यंत्र को मुंहमांगी कीमत देकर भी हासिल करने का प्रयास करते है। इससे परिस्थिति गंभीर हो गई है। प्रतिमाओं का लगातार अंग–प्रत्यंगों के खुरचने से उनका क्षरण होना आरम्भ हो गया है। चूंकि यह कार्य प्राचीन समय से स्थानीय मान्यता के अनुरूप चला आ रहा है। इसलिए कोई भी स्थानीय इस परम्परा के विरोध का साहस नहीं जूटा पाते। पुरातात्विक सम्पदा का नष्ट होना अत्यंत ही दुखद घटना है। उस समय तो अधिक कष्ट होता है। जब इस घटना को स्वयं इस आधुनिक काल में मनुष्य ही अंजाम दे रहे है। चूंकि यह इलाका सघन नक्सली क्षेत्र है, वहां तक पुलिस प्रशासन की पहुँच भी नहीं है। इसलिए वहां कोई भी प्रतिमा या पुरातात्त्विक सामाग्री सुरक्षित नहीं कहीं जा सकती। मनुष्य के दिनो–दिन अंधविश्वासी व्यवहार एवं उसके पालन से पुरातात्त्विक सम्पदा का संरक्षण चिंतन का विषय हो गया है। आदिवासी समाज को अपने उक्त देवी–देवताओं के संरक्षण का जिम्मा निभाना चाहिए। लेकिन इसके विपरीत वे स्वयं उन्हें क्षतिग्रस्त कर रहे है। वर्तमान समय में उनकी मुखमुद्राओं को खरोच–खरोच कर पूर्ण रूप से क्षरित कर दिया गया है। प्रशासन को इन गतिविधियों का ज्ञान अवश्य है, लेकिन वे सुरक्षा उपलब्ध कराने के नाम पर असहाय से लगते है। बस्तर क्षेत्र में स्थित यह स्थल पूर्ण रूप से तंत्रयानी समुदाय से घिरा हुआ है। जिसके कारण ही अंधविश्वासी कियाकलापो को सदैव बल मिलता रहता है। इस प्रकार की परम्परा के पीछे विश्वास का एक कारण यह भी हो सकता है कि चाहे जिस प्रकार से भी हो अपनी इच्छाएं पूर्ण किये जा सकते है। लेकिन इतना अवश्य है कि इससे मनुष्य की

मानसिकता लगातार प्रदूषित होती है तथा वह देवी–देवताओं के प्रभाव का गलत इस्तेमाल भी करते है। इस कारण वहां के प्रत्येक देवी–देवता में तंत्रयान का प्रभाव एवं कर्म देखने को मिलता है।

भोंगापाल के बौद्ध प्रतिमा के विनाश का स्वरूप वहां की स्थानीय मान्यता सिद्ध हो रही है। जिससे उसका पूर्व का स्वरूप मिटते जा रहा है। भू–स्पर्श मुद्रा में स्थित बुद्ध का एक हाथ पूरा गायब हो गया है। जबकि दूसरे हाथ को कोहनी तक नष्ट कर दिया गया है। लगता है आने वाले समय में इस प्रतिमा की यही गति बराबर बनी रहेगी। अतएव शासन–प्रशासन से यही अपेक्षा है कि वे यहां स्थित बहुमुल्य पुरातात्त्विक सम्पदा का यथासंभव संरक्षण करे। ताकि आने वाली पीढ़ी, शोधार्थी, पर्यटक एवं जिज्ञासुओं को उनका प्रत्यक्षीकरण हो सके।

संदर्भ ग्रन्थः

1. डॉ. नागवंशी चैन सिंह, छत्तीसगढ़ की बौद्ध कला, शोध प्रबंध (अप्रकाशित)।
2. संपा.डॉ.झा मंगलानंद, लेखक –डॉ. नागवंशी, चैन सिंह– छत्तीसगढ़ के हीनयानी बौद्धस्तूप एवं क्षेत्रीय पर्यटन स्थल।

शोधार्थी,
प्रा.मा.इ.सं.एवं पुरातत्व विभाग
इं.क.सं.वि., खैरागढ़

***